P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-8* ISSUE-7* March- 2021
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

प्राचीन कालीन भारतीय सामाजिक व्यवस्था का विश्लेषण
Analysis of the Indian Social System of Ancient Times

Paper Submission: 04/03/2021, Date of Acceptance: 15/03/2021, Date of Publication: 25/03/2021

शेख ताज हसन
सहायक प्राध्यापक,
इतिहास विभाग,
शासकीय महाविद्यालय,
पथरिया, दमोह,
मध्य प्रदेश, भारत

नीरज जायसवाल
सहायक प्राध्यापक,
इतिहास विभाग,
शासकीय महाविद्यालय,
जैतहरी, अनूपपुर,
मध्य प्रदेश, भारत

सारांश

मनुष्य सामाजिक प्राणी है, समाज से अलग मनुष्य का सामाजीकरण असंभव है। आदिम काल में मनुष्य भोजन एवं सुरक्षा संबंधी जरूरतों के लिए टोलियों में रहना शुरू करता है। प्रथम सामाजीकरण यहीं से शुरू होता है। समय बदलता रहा और समय के साथ ही सामाजीकरण की यह प्रवृत्ति नित नए रूप धारण करती रही। शुरुआती दौर में मानव के संबंध सरलीकृत थे। धीरे–धीरे धर्म और अंधविश्वासों के वशीभूत होकर मनुष्य ने अपने कुछ विश्वास कायम कर लिये। दूसरे मनुष्य में लोगों पर अधिकार कर उनके शासित करने की भावना ने मनुष्यों में आर्थिक एवं धार्मिक विभेद बढ़ा दिए। भारतीय इतिहास में नवपाषाण काल से लेकर राजपूत काल (पूर्व मध्य काल) के उक्त सामाजिक व्यवस्था का विश्लेषण सामाजिक संबंधों के जटिलतर होने की कहानी व्यक्त करता है।

Man is a social animal, socialization of human beings is impossible from society. In the primitive period man starts living in groups for food and security needs. The first socialization starts from here. Time kept changing and this trend of socialization took new forms with the passage of time. In the initial phase, human relations were simple. Gradually subjugated by religion and superstitions, man established some of his beliefs. In other human beings, the spirit of ruling and ruling the people increased the economic and religious differences among humans. The analysis of the said social system from the Neolithic period to the Rajput period (pre-medieval period) in Indian history tells the story of the complexity of social relations.

मुख्य शब्द : समाजीकरण, सामाजिक व्यवस्था, वर्ण,वैदिक काल, निर्योग्यता, निरीश्वरवादी, पुनर्विवाह,जाति
Socialization, social order, varna,Vedic period, disability, monotheistic, remarriage, caste

प्रस्तावना

वैसे तो भारतीय उपमहाद्वीप के इतिहास के अध्ययन के लिए विद्वान अनेक प्रकार से काल विभाजन करते हैं। किन्तु प्रायः तुर्कों के आगमन से पूर्व के काल को भारत का प्राचीन काल के रूप में निरूपित किया जाता है।

पृथ्वी पर मानव का विकास

भू वैज्ञानिक दृष्टि से पृथ्वी की आयु 4.6 अरबवर्ष मानी जाती है, और जीवन के आरंभ कि अवधि 3.5 अरब वर्ष मानी जाती है। करोड़ों वर्षो तक जीवन का विकास बहुत धीमी गति से हुआ। प्राचीनतम मानव का विकास तकरीबन तीन करोड़ साल पहले प्रारंभ होता है।

ऐतिहासिक दृष्टि से प्राचीन इतिहास की विषय वस्तु 50 हजार साल से कुछ अधिक ही पुरानी है। जब माना जाता है कि मानव ने इशारों में ही सही, एक दूसरे से सम्पर्क स्थापित करने के लिए, कुछ प्रतीकों का इस्तेमाल शुरू कर दिया था। सामूहिक खतरा मनुष्य को समाजवादी बना देता है। अतः उक्त काल में मानव ने अपनी सुरक्षा व भोजन संग्रहण के लिए समूह में रहना शुरू किया। यही से समाजी करण की शुरुआत हुई। मानव ने पशुओं को पालतू बनाया, आग का आविष्कार किया।

भारतीय उपमहाद्वीप में मनुष्यों के बीच बढ़ते समाजीकरण और विकास के प्राचीनतम प्रमाण मेहरगढ़ से प्राप्त होते हैं। मेहरगढ़, इतिहास की भाषा में भारतीय उपमहाद्वीप में नव पाषाण कालीन सबसे प्राचीनतम ज्ञात बस्ती है।

मेहरगढ़ का काल ईसा पूर्व 7000 निर्धारित किया गया है। मेहरगढ़, वर्तमान पाकिस्तान के बलूचिस्तान प्रांत में स्थित है। मेहरगढ़ से स्थायी जीवन के प्रारम्भिक साक्ष्य मिलते हैं।

नवापाषण काल में सामाजिक जीवन के साक्ष्य

नवपाषण कालीन प्राचीनतम बस्ती मेहरगढ़ से सामाजिक संस्तरण के कोई साक्ष्य प्राप्त नहीं होते। सामाजिक जीवन सामूहिकता के सिद्धांत पर आधारित रहा होगा। मार्क्स के शब्दों में ''इसे प्रारम्भिक साम्यवाद की अवस्था कहते हैं।'' अर्थात जो समाज उत्पादक था, वही उपभोक्ता था। वर्ग संघर्ष या सामाजिक विभाजन के साक्ष्य नहीं मिलते। मेहरगढ़ बस्ती के बाद वाले काल में भारत के विभिन्न भागों में नवपाषाणिक बस्तियां दृष्टिगोचर होती हैं। आगे चलकर संभवतः इन्हीं बस्तियों ने हड़प्पा सभ्यता के विकास में योगदान दिया होगा।

हड़प्पा सभ्यता में सामाजिक व्यवस्था

हड़प्पा सभ्यता भारतीय इतिहास के अर्द्धऐतिहासिक भाग का हिस्सा है, अर्थात वह काल जब मानव ने लिपि का विकास तो कर लिया, किन्तु आधुनिक इतिहासकार उसे पढ़ने मे अभी तक अक्षम रहे हैं। लिपि के ज्ञान के अभाव में हड़प्पा सभ्यता में समाजीकरण की जानकारी सीमित ही है। हड़प्पा सभ्यता की सामाजिक अवस्था के अध्ययन के लिए हमें,हड़प्पा सभ्यता के अन्य उपलब्ध साक्ष्यों पर निर्भर होना पड़ता है। हड़प्पा सभ्यता के विभिन्न स्थलों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि घरों के आकार अलग अलग थे। मोहन–जोदड़ो में 70x123x77 मीटर के आकार के एक विशाल भवन के अवशेष मिले हैं। वहीं हड़प्पा में दो कमरों के घर भी प्राप्त हुए हैं, इन छोटे घरों के उत्तर में 18 गोल चबूतरे मिले हैं,प्रत्येक के बीच में एक बड़ा छेद है, जिनमें लकड़ी की मूसल लगी हुई होगी। इन चबुतरों में अनाज के साक्ष्य मिले हैं। जिससे सिद्ध होता है यहां अनाज साफ किया जाता था। और यह काम करने वाले मजदूर उन दो कमरों के मकान में रहा करते होंगे। जबकि दो दो मंजिला विशाल भवन, संपत्ति शाली वर्गों के आवास स्थल रहे होंगे। यहां स्पष्ट रूप से आर्थिक रूप से वर्गीकृत समाज के लक्षण दिखाई देता हैं। इसके अतिरिक्त हड़प्पा सभ्यता के अधिकांश स्थल दो भागों में विभाजित मिलते हैं– पहला दुर्गीकृत भाग, दूसरा दुर्गीकरण से आरक्षित भाग। निश्चित ही दुर्गीकृत भाग में समाज के प्रभाव शाली लोगो का निवास रहा होगा, जो अपनी और सम्पत्ति की सुरक्षा के लिए सतर्क रहे होंगे। इससे भी हड़प्पा सभ्यता में समाज के वर्गीकरण की पुष्टि होती है। सैंधव सभ्यता मातृसत्तात्मक थी।

वैदिक कालीन सामाजिक व्यवस्था

हड़प्पा सभ्यता के पतन (1750 ईसा पूर्व) के पश्चात 1500 ईसा पूर्व में आर्यों का आगमन होता है। आर्य, कबिलाई पद्धति आधारित ग्रामीण संस्कृति के वाहक थे। अधिकांश इतिहासकार इस बात से सहमत है कि आर्य मध्य एशिया के मूल निवासी थे। जहां से विभिन्न कालों में एक से अधिक आर्य कबीलों ने भारत में प्रवेश किया।आर्यों का सबसे प्राचीन ग्रंथ ऋग्वेद है। जिसका काल 1500 ईसा पूर्व – 1000 ईसा पूर्व निर्धारित किया है। इसके अतिरिक्त सामवेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद और परवर्ती साहित्य का काल 1000ईसा पूर्व से 600 ईसा पूर्व माना है।

आर्यों का प्रारम्भिक जीवन पशु चारण पर आधारित था। कृषि का स्थान गौड़ था। आर्यों की अर्थव्यवस्था के विश्लेषण से पता चलता है कि जो वर्ग उत्पादक था वही उपभोक्ता था। इसीलिए हम कह सकते हैं कि आर्यों के आगमन के प्रारम्भिक काल में आर्यों में आर्थिक आधार पर संस्तरण नहीं था। सामाजिक क्षेत्र में आर्य पहले पहल तीन वर्गो में विभक्त होते हैं–

1. राजा (शासक वर्ग)
2. पुरोहित (धार्मिक अनुष्ठान करने वाले)
3. सर्व साधारण

इन्हे वर्ण के आधार पर ब्राह्मण, क्षत्रिय,वैश्य के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।किंतु उपरोक्त विभाजन का अर्थ है यह कदापि नहीं था कि उनमें वर्ण चेतना थी जैसा कि एक श्लोक के भाग से ज्ञात होता है ''मैं चारण हूं मेरे पिता वेद हैं और मेरी मां अनाज पीसती है।'' संपूर्ण आर्य सभ्यता पितृसत्तात्मक आधार पर संगठित थी, जिसमें परिवार का मुखिया परिवार का सबसे वृद्ध पुरुष होता था । ऐसा प्रतीत होता है कि शुरुआती समय में मुखिया के अधिकार असीमित थे। वे अपनी संतानों को बेच भी सकते थे । वरुण सूक्त के शुनः शेप के आख्यान से ऐसा निष्कर्ष निकाला जाता है कि पिता अपनी संतान को बेच सकता था स्पष्ट है पिता का परिवार पर एकाधिकार था किंतु उक्त उदाहरण अपवाद स्वरूप ही थे।

पहले पहल जैसा कि ऊपर उल्लेख हुआ है वर्ण आधारित व्यवस्था में वर्ण चेतना का अभाव था। वर्ण जिसका इस्तेमाल रंग के अर्थ में हुआ है, ऋग्वेद में आर्यों को जहां श्वेत वर्ण और अनार्य को श्याम वर्ण का उद्धृत किया गया है। भारतीय उपमहाद्वीप के मूल निवासियों पर आर्यों की विजय ने, आर्यों की सामाजिक व्यवस्था के समक्ष यक्ष प्रश्न उपस्थित कर दिया कि इतनी बड़ी आबादी को आर्यों की मूल सामाजिक व्यवस्था के तहत कैसे लाया जाए? अनार्य (मूलनिवासी), जो अभी तक भारतीय उपमहाद्वीप के शासक थे, जिनसे युद्ध में विजय होकर आर्य शासक बने थे, सामाजिक संस्तरण में उनको निचला स्थान प्रदान किया अब वर्ण व्यवस्था में शूद्र नामक नए वर्ण की उत्पत्ति हुई और शायद यही वही समय था, जब ऋग्वेद के दसवें मंडल में पुरुष सूक्त को शामिल कर वर्ण व्यवस्था को संस्थागत रूप दे दिया गया आर्यों को अपने रक्त पर गर्व था अतः अनार्यों से रक्त के सम्मिश्रण को रोकने के लिए भी वर्ण चेतना का उदय हुआ। अनार्य के अतिरिक्त ऐसे आर्य जिन्होंने निर्धारित वैदिक परंपरा को मानने से इनकार किया उन्हें भी तिरस्कृ त रूप से शूद्र माना गया है। महिलाओं के साथ भेदभाव कम थे। उनको शिक्षा प्राप्त करने, संपत्ति धारण करने का अधिकार था। बालिकाओं के उपनयन संस्कार का भी उल्लेख मिलता है। पर्दा प्रथा का प्रचलन नहीं था। कई स्त्रियां जैसे सिक्ता, घोषा, अपाला, लोपामुद्रा द्वारा तो वैदिक मंत्रों का निर्माण भी किया गया है। विधवा विवाह होते थे, नियोग प्रथा का भी प्रचलन था।

उत्तर वैदिक काल में सामाजिक व्यवस्था

ईसा पूर्व 1000 से 600 तक के काल को उत्तर वैदिक काल कहा जाता है। जिसमें सामवेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद, ब्राह्मण, आरण्यक तथा उपनिषदों की रचना हुई। इस काल में भी संयुक्त परिवार प्रणाली जारी थी। जो पितृसत्तात्मक थी, अभी भी पिता के अधिकार परिवार में असीमित थे। ऐतरेय ब्राह्मण से पता चलता है कि अजीत गर्त ने अपने पुत्र शुनः शेप को 100 गायों को लेकर बलि के निमित्त बेच दिया था, किंतु इस प्रकार की घटनाएं अपवाद स्वरूप ही थी, साधारणतः परिवार के संबंध अच्छे थे।

उत्तर वैदिक कालीन समाज महिला और वर्ण व्यवस्था में निम्न स्थान रखने वाले वर्णों के प्रति असहिष्णु होता प्रतीत होता है। महिलाओं, वैश्य, शुद्र के अधिकारों में कटौती कर दी गई। महिलाओं की स्वतंत्रता पर कुछ हद तक अंकुश लगा दिए गए। एक पत्नी विवाह को आदर्श माना जाता था, किंतु बहु विवाह प्रथा भी प्रचलित थी।

वैश्य, व्यापार के साथ–साथ खेती भी करते थे। वैदिक काल में शासक इन्हीं से बड़ी मात्रा में कर वसूलते थे।वैदिक काल में उन्हें अनस्य बलाधिकृत कहा गया है। शूद्रों को तीनों वर्णों का सेवक कहा गया है, वैदिक काल में इन्हें अनस्यप्रेयस्य कहा गया है।

सूत्र काल एवं महाकाव्य काल में सामाजिक व्यवस्था

उत्तर वैदिक काल के बाद सूत्र काल एवं महाकाव्य काल में (रामायण, महाभारत) समाज के निम्न वर्गों की स्थिति बिगड़ती चली गई। विभिन्न प्रकार की धार्मिक और सामाजिक निर्योग्यता, उन पर लाद दी गई। व्यापार आधारित समूह अब कठोर होकर जाति के रूप में परिवर्तित हो गए। अब जातियों ने निश्चित आकार ग्रहण कर लिया। यद्यपि महाकाव्य काल में शूद्रों की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति में कुछ सुधार प्रतीत होता है ,अब सेवा वृत्ति के अतिरिक्त, शूद्रों को इस काल में कृषि, पशुपालन का भी अधिकार दिया गया। यहां महाभारत कालीन शूद्रों के नाम बताना समाचीन होगा, जिन्होंने शूद्र होने के बाद भी समाज में सम्मानजनक स्थान प्राप्त था, इनमें विदुर, मातंग, कायव्य प्रमुख हैं।

वैदिक काल की अपेक्षा इस युग में स्त्रियों की स्थिति में गिरावट दर्ज की गई यद्यपि उच्च वर्णों की स्त्रियां पर्याप्त शिक्षित थीं। किंतु गरीब तबके की स्त्रियां इतनी भाग्यशाली ना थी। इस काल में समाज में सती प्रथा का चलन धीरे–धीरे बढ़ने लगा, किंतु स्त्री सती हो, यह अनिवार्य ना था। जैसे पांडु की पत्नी माद्री सती हो गई किंतु महाभारत में वीरगति को प्राप्त अन्य योद्धाओं में से अधिकांश की पत्नियों के सती होने के साक्ष्य प्राप्त नहीं होते। पर्दा प्रथा के चलन के प्रमाण इस काल में प्राप्त होते हैं।

संक्षेप में, आर्यों के आगमन के बाद सामाजिक व्यवस्था के कुशल संचालन के लिए बनाई गई कर्म आधारित चतुवर्णी व्यवस्था का स्थान, जन्म आधारित चतु वर्ण व्यवस्था लेती जा रही थी। जहां ब्राह्मण, क्षत्रिय उच्च वर्णी हो गए, तो वही वैश्य, शूद्रों को निम्न वर्ण में मान लिया गया। वर्णों के साथ–साथ जाति व्यवस्था के उदय ने सामाजिक संबंधों को और जटिल कर दिया। निम्न वर्ग और निम्न जातियों के दमन से संबंधित आख्यान, उस काल के धर्म ग्रंथों में भरे पड़े हैं। जातियों के उदय के साथ ही जातियों की संख्या में भी वृद्धि दृष्टिगोचर होती है, दो वर्णों के संसर्ग से उत्पन्न संतानों को प्रायः हेय दृष्टि से देखा जाता था वर्णों और जातियों में विभाजित समाज को इन वर्णसंकर जातियों ने और अधिक विभाजित कर दिया। आगे आने वाले काल में वर्ण संकर जातियों को विभिन्न सामाजिक निर्योग्यताओं से गुजरना पड़ा।

मौर्य कालीन सामाजिक व्यवस्था

वैदिक युग की समाप्ति के बाद उत्तर भारत में 16 महाजनपदों तथा कुछ गणतंत्र की जानकारी प्राप्त होती है। महाजनपद, जहां वंशानुगत राजाओं द्वारा शासित थे, वही गणतंत्र में राजा का चुनाव होता था ।16 महाजनपदों में मगध ने अपनी विशिष्ट क्षेत्रीय भौगोलिक स्थिति, पराक्रमी राजाओं एवं कुछ हद तक उदार सामाजिक संस्कृति (चूंकि वैदिक परंपरा के क्षेत्र में प्रसार के बावजूद पूर्व वैदिक परंपराओं व सभ्यता का लोप नहीं हुआ था) के कारण मगध महाजनपद से एक विशाल राज्य में परिवर्तित हो गया। मौर्यों के समय मगध साम्राज्य का अधिकतम विस्तार हुआ।

मौर्य कालीन सामाजिक व्यवस्था, वर्णाश्रम पर आधारित थी। विभिन्न व्यवसाय करने वाले कारीगरों के समूह कठोर जाति व्यवस्था के अंग बन गए थे ,अब व्यवसाय, जाति आधारित थे। जिसे किसी भी स्थिति में नहीं बदला जा सकता था। कोई व्यक्ति इन जातियों से इतर वैवाहिक संबंध स्थापित नहीं कर सकता था ।चार वर्णों ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र में ब्राह्मण ,क्षत्रियों का समाज में श्रेष्ठ स्थान था। जबकि वैश्य द्विज होने के बाद भी प्रथम दो वर्णों के समान सम्मान के भागी नहीं थे, यद्यपि व्यापार वाणिज्य में हुई उन्नति ने उन्हें अत्यधिक धनाढ्य अवश्य बना दिया था, किंतु सामाजिक संस्तरण में उनको सम्मानास्पद स्थान नहीं मिला। इसी का परिणाम था, वैश्यों के द्वारा निरिश्वरवादी जिनमें बौद्ध व जैन मत प्रमुख थे, को आर्थिक संरक्षण प्रदान किया गया ।आगे चलकर व्यापारियों द्वारा दिए गए प्रभूत दान से बौद्ध और जैन मत की अत्यधिक उन्नति हुई। इस काल में शूद्रों की स्थिति में सुधार के संकेत मिलते हैं। कौटिल्य ने अपने ग्रंथ अर्थशास्त्र में पशुपालन, व्यापार व कृषि से शूद्रों को अपनी आजीविका चलाने की अनुमति प्रदान की है, जिसे सम्मिलित रूप से वार्ता कहा गया है। शुद्र सेना में सम्मिलित हो सकते थे। स्पष्ट तौर से शूद्रों की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ, किंतु सामाजिक पिछड़ापन बरकरार रहा। इस काल के धार्मिक, कानूनी ग्रंथों में शूद्रों के साथ किए गए अपराधों पर ना के बराबर दंड का प्रावधान, शूद्रों की छाया मात्र से अपवित्र हो जाने की कल्पना, अंतिम संस्कारों के लिए चारों वर्णों के लिए अलग–अलग स्थल जैसे उदाहरण सिद्ध करते हैं कि शूद्रों की आर्थिक अवस्था भले सुधरी हो किंतु समाज की मानसिकता उनके प्रति तिरस्कार की ही रही। इस विडंबना का एक उदाहरण वर्तमान परिवेश से दिया जा सकता है, आजादी के बाद दलित वर्ग को संविधान में आरक्षण व विभिन्न प्रकार की छुआछूत से मुक्ति संबंधी कानूनी अधिकार दिए।

इससे दलितों की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ किंतु क्या इस वर्ग के साथ जाति आधारित भेदभाव समाप्त हो गए? जवाब – नहीं। दलितों के साथ शहरी व ग्रामीण दोनों इलाकों में भेदभाव जारी हैं। शहरों में दलितों को आज भी मकान किराए से नहीं मिलते, ग्रामों में तो और भी अधिक सामाजिक निर्योग्यता दलितों पर लागू है।

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि शूद्रों का सामाजिक बहिष्कार मौर्य काल में भी जारी था ,यद्यपि शासक वर्ग दलितों के प्रति कुछ उदार जान पड़ता है, इसका एक कारण ऐसे वर्गों की विशाल आबादी का होना भी है। मौर्य साम्राज्य के संचालन के लिए विशाल नौकरशाही की व्यवस्था की गई, लाखों की सेना, दूरस्थ क्षेत्रों तक साम्राज्य की पकड़ बनाए रखने के लिए धन की अतिरिक्त आवश्यकता थी, और यह धन जंगलों को साफ कर खेती योग्य भूमि विकसित कर, व्यापार को बढ़ावा देकर प्राप्त किया जा सकता था संभवत मौर्य सम्राटों ने इसी युक्ति का सहारा लेकर दलितों को खेती ,पशुपालन व व्यापार की छूट दी। इस काल के लगभग सभी ग्रंथ कृषि और व्यापार में शानदार विकास की गाथा कहते हैं। इसी कारण मौर्यों के समय कृषि अधिशेष की प्राप्ति हो सकी।

चाणक्य के अर्थशास्त्र के अतिरिक्त यूनानी राजदूत मेगास्थनीज द्वारा रचित इंडिका नामक ग्रंथ से भी हमें तात्कालिक सामाजिक व्यवस्था की जानकारी मिलती है। मेगस्थनीज ने भारतीय समाज में सात वर्गों का उल्लेख किया है दार्शनिक, किसान, योद्धा, पशुपालक, कारीगर, निरीक्षक और मंत्री। स्पष्ट है कि मेगस्थनीज भारतीय जाति व्यवस्था को समझ नहीं सका उसने जाति के स्थान पर वर्गों का वर्णन किया है। दार्शनिकों की जाति को मेगास्थनीज ने दो भागों में बांटा है पहला ब्राह्मण दूसरा श्रमण, दोनों का समाज में सम्मानजनक स्थान था, वे सादा जीवन जीते थे, तत्कालीन शिक्षा व्यवस्था उन्हीं के हाथों में थी, अपने ज्ञान के कारण भी पूजनीय थे, मौर्य शासक आय का एक हिस्सा इनके भरण पोषण पर खर्च करता था।

समाज में सर्वाधिक किसान थे, इसके बाद क्षत्रियों का स्थान था, वैश्य व्यापार से संबंधित थे। इसके अतिरिक्त बड़ी मात्रा में वर्णसंकर जातियां थी जो अनुलोम प्रतिलोम विवाह से उत्पन्न हुई थी। चांडाल जाति को जाति व्यवस्था में सबसे निम्न स्थान प्राप्त था। मौर्य समाज में दास व्यवस्था भी प्रचलित थी। चाणक्य के अर्थशास्त्र में दासो के अनेक प्रकार बताए गए हैं, किंतु उसने शूद्रों के स्थान पर म्लेच्छों को ही दास बनाने की बात कही है। दूसरी ओर मेगास्थनीज सहित अन्य यूनानी यात्रियों ने भारत में दास प्रथा ना होने की बात कही है। ऐसा प्रतीत होता है कि भारत में दासो के प्रति व्यवहार अच्छा था अथवा दासो के कामों और सामान्य जन के कामों में विशेष फर्क ना होने के कारण यूनानी दास प्रथा को समझ नहीं सके।

स्मृति काल की अपेक्षा मौर्य काल में महिलाओं के अधिकार अधिक सुरक्षित थे। उन्हें पुनर्विवाह का अधिकार था, नियोग प्रथा भी प्रचलित थी। किंतु धनाढ्य लोगों में अब पर्दा प्रथा का प्रचलन बढ़ने लगा था। कुलीन परिवारों की स्त्रियां घरों से नहीं निकलती थी। ऐसी महिलाओं को अर्थशास्त्र में अनिष्कासिनी कहा गया है। अर्थशास्त्र में वेश्याओं का भी उल्लेख है, जिन्हें गणिका कहा गया है। इनके नियमन के लिए शासन ने गणिकाध्यक्ष नामक अधिकारी की नियुक्ति कर रखी थी।स्वतंत्र रूप से वेश्यावृत्ति को अपनाने वाली स्त्री को रूपाजीवा कहा जाता था।

शुंग/सातवाहन काल में सामाजिक स्थिति

मौर्यों के काल में छठी शताब्दी ईसा पूर्व में विकसित निरिश्वर वादी धार्मिक आंदोलनों का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। चंद्रगुप्त मौर्य ने जैन धर्म अपनाया, तो वहीं उसके पुत्र बिंदुसार आजीवक मत का अनुयाई था ,वही अशोक उत्साही बौद्ध था। वस्तुतः यह मौर्यों के युग की आवश्यकता भी थी, क्योंकि इस काल में रूढ़िवादी वैदिक धर्म के विरुद्ध निरिश्वर वादी धार्मिक आंदोलनों ने समाज के एक बड़े तबके को प्रभावित किया था। कोई भी राजा इन प्रभावों से अछूता नहीं रह सकता था इसलिए सामाजिक आवश्यकता के अनुसार मौर्यों ने वैदिक धर्म के साथ–साथ इन धर्मों को भी संरक्षण प्रदान किया। अशोक की धम्म नीति किसी धर्म विशेष की नीति नहीं थी, बल्कि नैतिक शिक्षाओं का एक ऐसा संग्रह था। जिसमें सभी धर्मों का सार संकलित था। किंतु मौर्यों के पतन के बाद प्रतिक्रियावादी तत्वों की स्थिति को मजबूत कर दिया। मौर्य के पतन 183 ईसा पूर्व के बाद पुष्यमित्र शुंग ने अपना शासन स्थापित किया। उसने वर्णाश्रम व्यवस्था की पुनः बहाली की। इसके अतिरिक्त इस काल में बहुत सी जातियां पैदा हो गई थी। मनुस्मृति शुंग काल में ही लिखी गई। मनुस्मृति मूलतः एक कानूनी सहिंता है। मनुस्मृति में वर्णाश्रम धर्म को श्रेष्ठ बताया गया है। मनु का मत है कि जो जाति अपने जातिगत पेशे को छोड़कर कोई अन्य व्यवसाय अपना ले, तो राजा को उनकी संपत्ति जप्त कर लेनी चाहिए। मनु शूद्रों के प्रति बहुत कठोर थे। शूद्रों की हत्या करने पर ब्राह्मण को क्या दंड मिलना चाहिए? इस पर मनु ने बताया कि उन्हें वही दंड दिया जाए जो किसी व्यक्ति को कुत्ते, बिल्ली, मेंढक को मारने पर दिया जाता है। मनु कहते हैं, शूद्रों को पहनने के लिए फटे पुराने कपड़े आदि दिया जाना चाहिए। स्पष्ट है शूद्रों की स्थिति दासों के समान हो गई। ब्राह्मणों को मनु ने आपत्ति काल में विभिन्न पेशे अपनाने की छूट दी। मनु क्षत्रियों और ब्राह्मणों की तुलना करते हुए कहते हैं कि 10 वर्षीय ब्राह्मण, 100 वर्षीय क्षत्रिय से श्रेष्ठ है ब्राह्मणों को मृत्युदंड नहीं दिया जाता था।

शुंग काल में स्त्रियों को विवाह विच्छेद की अनुमति नहीं थी। मनु के अनुसार विवाह आजीवन चलने वाली संस्था है। मनु के अनुसार– जहां नारियों की पूजा होती है वहां देवता निवास करते हैं। सती प्रथा के साक्ष्य नहीं मिलते। विधवा विवाह होते थे। कुल मिलाकर स्त्रियों की स्थिति संतोषजनक थी।

दक्षिण भारत में तीन शताब्दियों तक सातवाहन वंश का शासन रहा जिसमें अनेक वीर शासक हुए। इनमें गौतमीपुत्र सातकर्णि जैसे शासक अपने नासिक अभिलेख में स्वयं को वर्णाश्रम धर्म को स्थापित करने वाला बताते हैं। इसी लेख में वह स्वयं को परम ब्राह्मण भी कहता है।

सातवाहन, आंध्र प्रदेश के रहने वाले मिश्रित कबीलाई लोग थे। वे ब्राह्मण बना दिया गए थे।इसलिए उत्तर के ब्राह्मण इन्हें हेय दृष्टि से देखते थे। सातवाहनों ने ही सर्वप्रथम ब्राह्मणों को भूमि दान की प्रथा चलाई। यद्यपि सर्वाधिक भूमि दान उन्होंने बौद्ध धर्म गुरुओं को दिया। शुंग काल के परावर्ती काल में गुप्त वंश की सत्ता स्थापित होने से पूर्व तक भारत में शक, कुषाण, हूण, पहलब, यूनानीयों ने भारत में अनेक आक्रमण किए जो पश्चिमोत्तर सीमा प्रांत से मध्य भारत तक हुए। शकों की एक शाखा महाराष्ट्र, गुजरात में अपना राज्य स्थापित करने में सफल रही। उपरोक्त शक्तिशाली वर्ग को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता था। अतः इस काल के धर्माचार्यों ने एक युक्ति निकाली, जिसमें इन जातियों को ''मनु ने पथ भ्रष्ट क्षत्रिय कहा है, जिन्हें निश्चित धार्मिक कृत्यों द्वारा पुनः वर्णाश्रम व्यवस्था में शामिल किया जा सकता था'' अतः इस काल में बड़ी मात्रा में विदेशियों को शैव, वैष्णव धर्म में दीक्षित किया गया।

गुप्त/हर्ष काल में सामाजिक व्यवस्था

इस काल में समाज परंपरागत रूप से चार वर्णों में ही विभक्त था, जिसका आधार कर्म ना होकर जन्म था। संपूर्ण काल में ब्राह्मण वर्ग को सर्वोच्च स्थान प्राप्त था। इस काल के स्मृति कारों ने वर्णों के आधार पर विभिन्न विभेदों को स्थापित किया। बराहमिहिर ने बृहत–संहिता में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्रों को क्रमशः पांच, चार, तीन और दो कमरों के घरों में रहने की अनुमति दी है। वर्णों के आधार पर ही न्याय व्यवस्था में भेदभाव किया जाता था। जातिगत पेशों का, कड़ाई से पालन की भावना इस काल में शिथिल पड़ गई थी। ब्राह्मणों ने अनेक पेशे अपना लिए थे। शुद्रक रचित मृछकटिक का पात्र चारुदत्त नामक ब्राह्मण था, जो व्यापारी (सार्थवाह) था। वहीं कुछ ब्राह्मणों ने शिल्प कर्म अपना लिया था। कई ब्राह्मण राजा हुए। इसी तरह क्षत्रिय वर्ण के कई सदस्यों ने व्यापार में रुचि ली। वैश्य परंपरागत रूप से व्यापारी थे, किंतु इस काल में राजा बन बैठे। गुप्त शासक मूलतः वैश्य थे, किंतु ब्राह्मणों ने क्षत्रिय घोषित कर उन्हें राजपद के योग्य मान लिया। निश्चित रूप से इसका पारितोषिक, कर मुक्त भूमि के रूप में ब्राह्मणों को प्राप्त हुआ, जिसे अग्रहार भूमि कहा जाता था। यद्यपि इस तरह की भूमि बौद्ध भिक्षुओं को भी बड़ी मात्रा में दी गई थी। इस काल की महत्वपूर्ण विशेषता शूद्रों की सामाजिक दशा में आंशिक उन्नति का होना था। शूद्र अब कृषक बन गए थे, वे भगवान के रूप में कृष्ण भगवान की पूजा कर सकते थे। रामायण महाभारत जैसे ग्रंथों को सुनने का अधिकार दिया गया था। इसी काल के ग्रंथ शूद्रककृत मृछकटिक से जानकारी मिलती है कि ब्राह्मण और शूद्र एक कुएं से पानी भरते थे। कालिदास, उज्जैन में कुछ शूद्र अधिकारी होने की बात बताते हैं। दास प्रथा का प्रचलन समाज में था। सबसे निम्न जाति चांडालों की थी, जिन्हें ग्रामों में प्रवेश के समय लकड़ी को पीटते चलना होता था ताकि कोई उनके स्पर्श मात्र से अपवित्र ना हो जाए। गुप्तकालीन स्त्रियों की दशा अपेक्षाकृत अच्छी थी। उच्च कुलीन वर्ग में प्रायः पर्दा प्रथा का प्रचलन था, किंतु अन्य वर्गों में यह प्रथा लोकप्रिय नहीं थी। समकालीन अभिलेखों में कायस्थ नामक अधिकारी की जानकारी मिलती है। जो इस समय तक जाति के रूप में परिवर्तित नहीं हुए थे। आने वाले समय में कायस्थ जाति के रूप में संगठित हो गए। जिन्होंने भूमि संबंधी ज्ञान के कारण ब्राह्मणों के एकाधिकार को गंभीर चुनौती दी। और कई राजकीय पदों पर कब्जा जमा लिया।

राजपूत कालीन सामाजिक व्यवस्था

राजपूत काल, सामाजिक व्यवस्था की दृष्टि से पुरातन काल की अपेक्षा अधिक कठोर प्रतीत होता है। समाज में ब्राह्मणों का स्थान सदा की भांति श्रेष्ठ था। राजा के पदाधिकारियों का चुनाव ब्राह्मणों में से ही होता था। क्षत्रियों का कर्म देश की रक्षा करना था। वह वीर थे, युद्धों में मौत को गौरव का विषय मानते थे, किंतु वे मिथ्याभिमानी और अहंकारी भी थे। इस काल में व्यापार की अवनति से वैश्यों का सामाजिक कद घट गया था वे शूद्रों के साथ संयुक्त कर दिए गए थे, और अब वह खेती से जुड़ गए थे। दूसरी ओर शुद्र पहले से ही खेती से जुड़ गए थे, जिससे शूद्रों की सामाजिक स्थिति सुधरी। समाज की उच्च कुल की स्त्रियों की स्थिति सम्मानजनक थी। पर्दा प्रथा का प्रसार बढ़ता जा रहा था। जौहर प्रथा, बेमेल शादी, कुलीन वर्ग में बहु विवाह आदि कुप्रथाएं प्रचलित थी।

निष्कर्ष

नवपाषाण कालीन सरलीकृत समाज, सामाजिक व्यवस्था बनाए रखने की दुहाई के नाम पर आर्यों के आगमन के पश्चात तीन भागों में बांट दिया जाता है। शुद्र वर्ण के उदय के साथ ही इनकी संख्या 4 हो जाती है। ऋग्वैदिक समाज के विभाजन का आधार कर्म था। किंतु उत्तर वैदिक काल और उसके बाद, समाज विभाजन का आधार जन्म हो गया। फिर शुरुआत होती है, ना खत्म होने वाली शोषण व्यवस्था, जिसने आने वाली शताब्दियों में विकृत रूप ले लिया। यहां तक कि निम्न वर्णी लोगों की हत्या तक को साधारण कृत्य बता दिया गया। वर्ण, जातियों में बटे समाज से कई बार विरोध के स्वर भी फूटे। इन्हें बौद्ध और जैन जैसे धार्मिक आंदोलनों ने अभिव्यक्ति दी। किंतु वर्ण, जाति से पीड़ित लोगों को यहां भी निराशा ही हाथ लगी।

जब बुद्ध और महावीर ने कर्म आधारित वर्ण व्यवस्था को समर्थन दिया। यह पिछले दरवाजे से वर्ण व्यवस्था को लागू करने जैसा ही था। युग बदले, साम्राज्य बदले, शासन व्यवस्था, शासन प्रणाली बदली। लेकिन नहीं बदली, तो वह सामाजिक और जातिगत व्यवस्था। जो 2500 साल पहले, सामाजिक व्यवस्था बनाए रखने के लिए लागू की गई थी। थोड़े बहुत परिवर्तनों के बाद आज भी भारतीय समाज इस व्यवस्था को ढो रहा है।

The neolithic period is divided into three parts after the arrival of the Aryans in the name of simplified society, the cry of maintaining social order. With the rise of the Shudra varna, their number becomes Four. Karma was the basis of the division of the Rigvedic society. But post-Vedic period and thereafter, the basis of social division was born. Then there is the beginning, the never ending exploitation system, which takesA distorted form in the coming

centuries, Even the killing of inferior people was described asA simple act. Many times the voices of opposition from the society divided among the castes / castes also erupted. Religious movements such as Buddhist and Jain gave expression to them. But people suffering from varna / caste also got frustrated here. When Buddha and Mahavira supported the karma-based varna system. It was the same as implementing the Varna system from the backdoor. The era changed, the empire changed, the governance system, the governance system changed. But that did not change, then that social and caste system. Which, 2500 years ago, was implemented to maintain social order? Indian society is carrying this system even today afterA few changes.

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *द्विजेंद्रनाथ झा वा कृष्ण मोहन श्रीमाली, प्राचीन भारत का इतिहास, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, पृष्ठ क्रमांक– 37*
2. *कृष्ण चंद्र श्रीवास्तव, प्राचीन भारत का इतिहास एवं संस्कृति, इलाहाबाद, पृष्ठ क्रमांक–40*
3. *कृष्ण चंद्र श्रीवास्तव, प्राचीन भारत का इतिहास एवं संस्कृति, इलाहाबाद, पृष्ठ क्रमांक– 49*
4. *रामशरण शर्मा, भारत का प्राचीन इतिहास, अनुवादक–देवशंकर नवीन/धर्मराज कुमार, ऑक्सफोर्ड प्रेस, नई दिल्ली पृष्ठ क्रमांक–57*
5. *रोमिला थापर, भारत का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ क्रमांक– 32*
6. *केसी श्रीवास्तव, प्राचीन भारत का इतिहास एवं संस्कृति, इलाहाबाद, पृष्ठ क्रमांक– 87 एवं 88*
7. *केसी श्रीवास्तव प्राचीन भारत का इतिहास एवं संस्कृति इलाहाबाद पृष्ठ क्रमांक –97*
8. *रामशरण शर्मा, भारत का प्राचीन इतिहास, अनुवादक–देवशंकर नवीन/धर्मराज कुमार पृष्ठ क्रमांक–158*
9. *बी एल बाशम, अद्भुत भारत, शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी आगरा, पृष्ठ क्रमांक–24*
10. *रोमिला थापर, भारत का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली पृष्ठ क्रमांक–68*
11. *कृष्ण चंद्र श्रीवास्तव, प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, इलाहाबाद, पृष्ठ क्रमांक–265*
12. *झा, श्रीमाली ,प्राचीन भारत का इतिहास, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, पृष्ठ क्रमांक–199*
13. *रोमिला थापर, भारत का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली पृष्ठ क्रमांक–74*
14. *झा, श्रीमाली, प्राचीन भारत का इतिहास, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, पृष्ठ क्रमांक–199*
15. *आर एस शर्मा, भारत का प्राचीन इतिहास, अनुवादक–देवशंकर नवीन/धर्मराज कुमार पृष्ठ क्रमांक–194*
16. *केसी श्रीवास्तव, प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, इलाहाबाद, पृष्ठ क्रमांक–287*
17. *रामशरण शर्मा, भारत का प्राचीन इतिहास, अनुवादक–देवशंकर नवीन/धर्मराज कुमार, पृष्ठ क्रमांक 228 एवं 425*
18. *झा श्रीमाली, प्राचीन भारत का इतिहास, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, पृष्ठ क्रमांक– 311*